सिंधु सभ्यता कालीन व्यापार एवं वाणिज्यः एक ऐतिहासिक अध्ययन

प्राप्तिः 18.02.26
स्वीकृतः10.03.26

22

रत्नेश कुमार
शोधार्थी, यू.जी.सी. नेट–एस.आर.एफ.
विश्वविद्यालय इतिहास विभाग
रांची विश्वविद्यालय, रांची
ईमेलः *ratneshgupta32@gmail.com*

सारांश

सिंधु सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे प्राचीन और पहली नगरीय सभ्यताओं में से एक है जिसकी विशेषता इसकी मजबूत अर्थव्यवस्था थी और इस आर्थिक उन्नति के पीछे यहाँ की नगर योजना, जल निकासी व्यवस्था, शिल्प उद्योग, मुहरें, गोदाम और बंदरगाह थे, जो यह संकेत देते हैं कि यहाँ एक सुव्यवस्थित व्यापारिक संगठन विद्यमान था। यह सभ्यता मुख्यतः वर्तमान पाकिस्तान और पश्चिमोत्तर भारत के क्षेत्र पंजाब, सिंध, राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और कच्छ में फैली हुई थी। आंतरिक व्यापार के साथ ही बाह्य व्यापार के भी स्पष्ट प्रमाण मिलते है कि इन्होंने मेसोपोटामिया, फारस और अफगानिस्तान जैसे क्षेत्रों से भी व्यापारिक संबंध स्थापित किए थे। इनकी मानकीकृत तौल–माप प्रणाली, मुहरों पर अंकित प्रतीक और संगठित गोदाम व्यवस्था यह प्रमाणित करती है कि इन्होंने व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति कर ली थी। प्रस्तुत लघु शोध लेख के माध्यम से सिंधु सभ्यता के व्यापारिक संगठन के स्वरूप, व्यापारिक प्रणाली में प्रयुक्त साधनों तौल–माप, मुहरें, बंदरगाह, आंतरिक और बाह्य व्यापार की संरचना और इनका सामाजिक और आर्थिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाएगा।

मुख्य बिन्दु

सिंधु सभ्यता, वाणिज्य, मुहर, शिल्प उद्योग, मनके, आंतरिक एवं बाह्य व्यापार

प्रस्तावना

सिंधु सभ्यता भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे प्राचीन और संगठित नगरीय सभ्यताओं में से एक थी, जिसका कालक्रम धर्मपाल ने लगभग 2300 ई.पू. से 1750 ई.पू. के बीच माना है तथा साक्ष्यों के अध्ययन करने के बाद व्हीलर ने 2500 – 1500 ई. पू. स्वीकार किया है।[1] यह सभ्यता मुख्यतः वर्तमान पाकिस्तान के हड़प्पा (पंजाब), मोहनजोदड़ों (सिंध) और पश्चिमोत्तर भारत के क्षेत्र कालीबंगन (राजस्थान), लोथल (गुजरात), राखीगढ़ी (हरियाणा) और धोलावीरा (कच्छ) में फैली थी। सिंधु सभ्यता में कोई राजा या साम्राज्य के स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलते, परंतु इतना स्पष्ट है कि अवश्य ही कोई सत्ता

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i01.22

रही होगी जिसके कुशल हाथों में सिंधु सभ्यता की कमान थी, जिसने इस सभ्यता की सबसे उल्लेखनीय विशेषता इसकी आर्थिक संगठन को मजबूती प्रदान की। यहाँ की नगर योजना, जल निकासी व्यवस्था, शिल्प उद्योग, मुहरें, गोदाम और बंदरगाह यह संकेत देते हैं कि यहाँ एक सुव्यवस्थित व्यापारिक संगठन विद्यमान था। इस सभ्यता के लोग ना केवल आंतरिक व्यापार में निपुण थे बल्कि इन्होंने मेसोपोटामिया, फारस और अफगानिस्तान जैसे क्षेत्रों से भी व्यापारिक संबंध स्थापित किए थे।[2] सिंधु सभ्यता के आर्थिक ढाँचे में व्यापार प्रमुख स्तंभ के रूप में उभरा। यह व्यापार केवल वस्तुओं के आदान–प्रदान तक सीमित नहीं था, बल्कि इससे सामाजिक संरचना, शिल्प–उद्योग तथा राजनीतिक स्थिरता को भी बल मिला। इनकी मानकीकृत तौल–माप प्रणाली, मुहरों पर अंकित प्रतीक और संगठित गोदाम व्यवस्था से यह स्पष्ट है कि सिंधु समाज में उत्पादन और वितरण के लिए एक नियोजित ढाँचा मौजूद था। सिंधु सभ्यता अब केवल प्रसिद्ध शहरों तक सीमित नहीं रही है बल्कि नई खोजों के अनुसार इस सभ्यता का विस्तार बढ़ता ही जा रहा है, जिसके द्वारा प्राचीन भारत की विस्तृत और विकसित सामाजिक–आर्थिक स्वरूप और भी ज्यादा स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

शोध के उद्देश्य

इस लघु शोध लेख के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:–

1. सिंधु सभ्यता के व्यापारिक संगठन के स्वरूप का विश्लेषण करना।
2. व्यापारिक प्रणाली में प्रयुक्त साधनों तौल–माप, मुहरें, गोदाम और बंदरगाह आदि का अध्ययन करना।
3. आंतरिक और बाह्य व्यापार की संरचना को साक्ष्यों के आधार पर समझना।
4. व्यापारिक गतिविधियों का सामाजिक और आर्थिक जीवन पर प्रभाव जानना।

व्यापारिक वस्तुएँ

विद्वानों का मत है कि सिंधु सभ्यता की आर्थिक प्रगति का मूल आधार कृषि और व्यापार था।[3] कृषि से अधिशेष उत्पादन हुआ और उस अधिशेष का वितरण एवं विनिमय व्यापार के माध्यम से हुआ। यही प्रक्रिया सभ्यता की आर्थिक नींव बनी। सिंधु सभ्यता की अर्थव्यवस्था विविध प्रकार के उत्पादन और व्यापारिक वस्तुओं पर आधारित थी। इन वस्तुओं को मुख्यतः चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:–

कृषि उत्पाद

सिंधु क्षेत्र की उपजाऊ मिट्टी और सिंचाई व्यवस्था ने कृषि को अत्यंत उत्पादक बनाया था। मोहनजोदड़ों तथा हड़प्पा में पाए गए विस्तीर्ण अन्न भंडारों से पुष्टि होती है कि इनका संरक्षण गांव के अतिरिक्त पैदावार से होता था।[4] हड़प्पा और मोहनजोदड़ों के उत्खननों से गेहूँ, जौ, खजूर, तिल, सरसों और कपास के बीज प्राप्त हुए हैं।[5] कपास का उल्लेख विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि मोहनजोदड़ों के अवशेषों में एक सूती कपड़ा चांदी के कलश के साथ चिपका हुआ प्राप्त हुआ है।[6] इन्हें कपास का उत्पादन करने का पूर्ण ज्ञान था।[7] यह इस बात का प्रमाण है कि कपास की खेती और वस्त्र–निर्माण व्यापारिक रूप से अत्यंत महत्वपूर्ण थे। इसके अतिरिक्त यहाँ से प्राप्त खजूर की गुठलियाँ यह प्रमाणित करती है कि इन्हें खजूर पैदा करने का ज्ञान था। इसके साथ ही यहाँ के

निवासी भोजन के रूप में फल, तरकारी, दूध, मछली और विभिन्न जानवरों जैसे कि गाय, भेड़, सूअर के गोश्त तथा पंछी ग्रहण करते थे।[8]

धातु एवं खनिज पदार्थ

सिंधु सभ्यता के नगरों में ताँबा, कांसा, सोना, चाँदी, सीसा और टिन के उपकरण मिले हैं।[9] इनमें से कुछ धातुएँ जैसे टिन, सोना, सीसा और चाँदी, उस क्षेत्र में स्वाभाविक रूप से उपलब्ध नहीं थी अतः इन्हें अफगानिस्तान, ईरान से आयात किया जाता था।[10] मेसोपोटामिया के शिलालेख और अभिलेख, जिनमें "मेलुहा" नाम से सिंधु क्षेत्र का उल्लेख मिलता है, जो इस बात की पुष्टि करता हैं कि यहाँ से बहुमूल्य धातु सोना का आयात किया जाता था।[11] इसके अतरिक्त भारतीय क्षेत्र में सोना मैसूर, तांबा राजस्थान और नीलम महाराष्ट्र से आयात किया जाता था।[12] इस प्रकार धातुओं का व्यापार सभ्यता के आर्थिक ढाँचे में केंद्रीय स्थान रखता था। धातु से निर्मित आभूषण, औजार, मूर्तियाँ और बर्तन ना केवल स्थानीय उपयोग में आते थे, बल्कि ये वस्तुएँ निर्यात योग्य भी थी। लोथल और धोलावीरा से प्राप्त धातु–कर्म के अवशेष इस बात के प्रमाण हैं कि यहाँ धातु कार्यशालाएँ अस्तित्व में थी। ये लोग ताँबे के हथियार और औजार बनाते थे। मुख्य हथियार तीर, कुल्हाड़ी, गदा और कटार थे। हालांकि हत्यारों के प्रयोग से ये अनजान थे। ताँबे या काँसे की हसियां, दराँती, आरी, छेनी और उस्तरे भी बनाए जाते थे। संभवत: ताँबा राजपुताना की खानों से तथा काँसे की वस्तुएँ बनाने के लिए दीन बम्बई, बिहार और उड़ीसा के राज्यों से लाया जाता था।[13]

शिल्प उद्योग की वस्तुएँ

सिंधु सभ्यता में शिल्पकला और हस्तशिल्प का असाधारण विकास हुआ था। हड़प्पा, मोहनजोदड़ों, चन्हूदड़ों और लोथल से मनके सहस्रों की संख्या में पाये गये हैं। लोग इन मनकों को लड़ियों में गूथंकर कई लड़ियों वाला हार बनाते थे। मृण्मूर्तियाँ का साक्ष्य इस बात का धोतक है कि नारियाँ मनकों की माला की बनी मेखला भी पहनती थीं। सिंधु सभ्यता के मनकों के निर्माण के लिए सेलखड़ी, गोमेद, कार्नीलियन, जैस्पर, इत्यादि पत्थरो का प्रयोग हुआ है।[14] धातुओं में सोना, चाँदी और तांबे का प्रयोग मनके निर्माण के लिए विशेष रूप से हुआ। काँचली मिट्टी, मिट्टी, शंख, हाथी दाँत आदि के भी मनके बने। सिंधु सभ्यता के मनकों के आकार प्रकार में पर्याप्त विविधता है।[15] मोहनजोदड़ों से प्राप्त मणि–मोती, शंख–आभूषण, हाथीदाँत के काम तथा पत्थर की मूर्तियाँ इस सभ्यता के उत्कृष्ट शिल्प कौशल को दर्शाते हैं।[16] लोथल और चन्हूदड़ों से प्राप्त मणि निर्माण की कार्यशालाएँ इस बात की पुष्टि करती हैं कि ये वस्तुएँ वृहद स्तर पर उत्पादित होती थीं और व्यापार के माध्यम से वितरित की जाती थीं।[17] हाथीदांत, कार्नेलियन, लापीस लाजुली आदि का वृहत मात्रा में व्यापार मेसोपोटामिया से भी होता था।[18] उपरोक्त कथन इस बात की पुष्टि करते है कि शिल्पकला व्यापारिक संगठन से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई थी।

विलासित एवं विदेशी वस्तुएँ

सिंधु सभ्यता में केवल उपयोगी वस्तुओं का ही नहीं, बल्कि विलास से जुड़ी वस्तुओं का भी उत्पादन और व्यापार होता था। इनमें सोने–चाँदी के आभूषण, रंगीन पत्थरों से बने हार, सजावटी मिट्टी के बर्तन और दुर्लभ खनिज शामिल थे।[19] कुछ आभूषण ऐसे थे जो स्त्री पुरुष समान रूप से

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i01.22

पहनते थे तथा कुछ ऐसे थे जो केवल स्त्रियाँ अथवा पुरुष ही पहनते थे। आभूषण की आकृति आकर्षक तथा कलात्मक होती थी तथा वे साधारण एवं बहुमूल्य धातुओं द्वारा बनाये जाते थे। कान, हाथ, पैर और गले में पहने जाने वाले आभूषण स्त्रियाँ ही पहनती थी। जिसके अंतरगर्त हार, भुजबन्धन, नाक की बालियां, अंगूठी, करधनी, बालों के पिन आदि अन्य प्रमुख आभूषण थे। आभूषणों के निर्माण में सोना, चांदी, हाथीदांत, कीमती पत्थर, सीप, मोती आदि का प्रयोग किया जाता था।[20] कुछ स्थलों से प्राप्त लापीस लाजुली पत्थर, जो अफगानिस्तान के बदख्शाँ क्षेत्र से आता था, जो यह संकेत देता है कि व्यापारिक संबंध दूरस्थ पर्वतीय क्षेत्रों तक फैले हुए थे।[21] इससे स्पष्ट होता है कि सिंधु सभ्यता का व्यापार केवल स्थानीय आवश्यकता तक सीमित नहीं था, बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी इसकी पहुँच थी।

व्यापार के साधन, माध्यम एवं प्रणाली

सिंधु सभ्यता का व्यापारिक संगठन ना केवल उत्पादन के विविध स्रोतों पर आधारित था, बल्कि उसमें तौल–माप, परिवहन और वितरण की सुसंगठित प्रणाली मौजूद थी। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य तौल–माप के बाँटों का उचित नियमों के साथ निर्माण, उत्पादित वस्तुओं के विक्रय के लिए बाजार की उचित व्यवस्था तथा बाह्य व्यापार को सुसंगठित करना था।[22] सिंधु सभ्यता में व्यापार के लिए समान तौल–माप, मुहरों की पहचान, गोदाम व्यवस्था, स्थलीय एवं जलमार्ग परिवहन सभी विकसित रूप में विद्यमान थे।[23] परिणामस्वरूप आंतरिक व्यापार के साथ–साथ बाह्य व्यापार के होने की जानकारी विभिन्न स्रोतों से प्राप्त होती है।

तौल–माप प्रणाली

हड़प्पा और मोहनजोदड़ों से प्राप्त पत्थर के भारों का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि सिंधु सभ्यता में मानकीकृत तौल प्रणाली प्रचलित थी। मार्शल ने अपने अध्ययन में उल्लेख किया कि ये भार सामान्यतः 1, 2, 4, 8, 16, 32, 64 के क्रम में पाए जाते हैं, अर्थात 2 की घात प्रणाली पर आधारित थे।[24] बटखरों की सबसे छोटे बाँट की तोल 13.64 ग्राम के बराबर है। बाँट, बटखरे प्राय पत्थर के होते थे तथा इनका आकार चौकोर होता था।[25] हड़प्पा, मोहनजोदड़ों, चन्हुदड़ों और सिंधु सभ्यता के अन्य स्थलों से संस्कृति के विभिन्न चरणों में प्राप्त बाँट लगभग एक ही तौल प्रणाली पर आधारित थे।[26] धातु की बनी एक तराजू के भी अनेक खंड इस सम्यता के अवशेषो में मिले हैं।[27] अर्थात् यह तौल–माप प्रणाली किसी ना किसी प्रशासनिक या व्यापारी निकाय द्वारा नियंत्रित थी, जो व्यापारिक लेनदेन की विश्वसनीयता को बनाए रखने का कार्य करती थी।

विनिमय प्रणाली

सिंधु सभ्यता में अभी तक किसी धातु मुद्रा का प्रमाण नहीं मिला है। संभावना है कि व्यापार वस्तु–विनिमय प्रणाली पर आधारित था।[28] हालाँकि, कुछ विद्वान यह मानते हैं कि मुहरें ही एक प्रकार की लेनदेन में पहचान का कार्य करती थीं।[29] सिंधु सभ्यता की सबसे विशिष्ट विशेषता इसकी मुहरें है। अब तक लगभग 2000 से अधिक मुहरें प्राप्त हुई हैं, जिन पर पशुओं की आकृतियाँ, प्रतीक चिन्ह, और कुछ अज्ञात लिपि में लेख प्राप्त हुए हैं।[30] इन मुहरों के विषय में सर्वप्रथम अलेक्जेंडर कनिंघम ने जानकारी प्रदान की थी।[31] मुहरों पर अधिकांशतः एकश्रृंगी, वृष, हाथी, बाघ, गैंडा, घड़ियाल और

हिरन आदि पशुओं की आकृतियाँ प्राप्त होती हैं। सबसे अधिक एकश्रृंगी की आकृति मिलती है।[32] मोहनजोदड़ों से मिली "एक सींग वाले बैल" की मुहरें सबसे प्रसिद्ध हैं। कई मुहरों में छेद पाए गए हैं जो यह संकेत देते है कि इन्हें संभवत: ताबीज की तरह प्रयोग में लाया जाता था।[33] मिट्टी के लोंदे पर कई मुद्रा छापे हुए प्राप्त होते हैं, जिससे प्रतीत होता है कि कई व्यापारियों का साझा व्यापार भी चलता था और किसी साझे लेन–देन के सिलसिले में उन सभी ने अपनी–अपनी मुहर बनवाई थी। अनेक मुद्राओं पर एक ही प्रकार के लेख और अभिप्राय हैं जो किसी व्यापारी विशेष या राजकर्मचारी के लगते हैं।[34] संभावना यह भी है कि विभिन्न प्रतीक विभिन्न व्यापारिक समुदायों या गोदामों का प्रतिनिधित्व करते थे। इस प्रकार मुहरें ना केवल व्यापारिक पहचान का साधन थी बल्कि व्यापारिक विश्वास प्रतीक के रूप मे भी प्रतिस्थापित थीं, जिसका धार्मिक रूप से भी व्यापक महत्व था।

परिवहन प्रणाली

सिंधु सभ्यता की आर्थिक समृद्धि का सबसे बड़ा आधार उसका विकसित व्यापारिक तंत्र था, जो न केवल नगरों के भीतर (आंतरिक व्यापार) बल्कि विदेशों (बाह्य व्यापार) तक विस्तारित था। यह सभ्यता संगठित उत्पादन, सुव्यवस्थित वितरण और दीर्घ दूरी के संपर्क मार्गों पर आधारित थी।[35] इस तंत्र ने ना केवल नगरों को आपस में जोड़ा, बल्कि मेसोपोटामिया, फारस, अफगानिस्तान, मध्य एशिया और अरब के तटों से भी स्थायी आर्थिक संपर्क स्थापित किए।[36] सिंधु सभ्यता में व्यापारिक परिवहन के दो प्रमुख माध्यम स्थल और जल मार्ग था। सिंधु क्षेत्र के विभिन्न नगरों को आपस में जोड़ने वाले स्थल मार्गों में बैलगाड़ी, ऊँट और खच्चरों का उपयोग किया जाता था।[37] इक्के, बैलगाड़ी तथा मनुष्यों द्वारा खींचे जाने वाली दो और चार पहियों की बनी हुई सवारियों के अनेक खिलौने प्राप्त हुए है। गाड़ियों में हाथी, गधे, बैल आदि जानवरों का उपयोग किया जाता था।[38] मोहनजोदड़ों से प्राप्त खिलौना बैलगाड़ियों के अवशेष यह संकेत देते हैं कि ये केवल खेल की वस्तुएँ नहीं, बल्कि वास्तविक परिवहन साधनों के प्रतीक थे। स्थल मार्ग गुजरात के तटवर्ती क्षेत्रों से लेकर अफगानिस्तान के पर्वतीय मार्गों तक फैले हुए थे। सिंधु सभ्यता का प्रमुख बंदरगाह लोथल था, जिसे इतिहासकार "भारतीय उपमहाद्वीप का प्रथम डॉकयार्ड" कहते हैं।[39] यह बंदरगाह लगभग 218 मीटर लंबा और 37 मीटर चौड़ा था, जो सिंचाई नहर से जुड़ा हुआ था।[40] यहाँ से समुद्र के माध्यम से वस्तुएँ मेसोपोटामिया, फारस और अरब के तटों तक पहुँचाई जाती थीं। एक मुद्रा तथा मिट्टी के बर्तनो पर जल मार्ग में प्रयुक्त होने वाले जहाज तथा नौका के चित्रों की प्राप्ति हुई है। इससे पता चलता है कि स्थल मार्ग के अतिरिक्त जल मार्ग से भी व्यापार होता था,[41] जो आगे चलकर भारतीय समुद्री व्यापार परंपरा की नींव बना।

गोदाम एवं भंडारण व्यवस्था

राजकीय स्तर पर अनाज के संरक्षण के लिए हड़प्पा, मोहनजोदड़ों और लोथल में विशाल अन्नागारों में अन्न का आगमन और निर्गमन शासन द्वारा नियंत्रित किया जाता था। इसके लिए शासन की ओर से उच्च पदाधिकारी, लिपिक, लेखाकार, मजदूर आदि नियुक्त किए गए थे। कर के रूप में वसूल किया गया अनाज इन अन्नागारों में संग्रहीत किया जाता था और एक तरह से ये अन्नागार उस समय के सरकारी बैंक या खजाने का कार्य करते थे।[42] हड़प्पा और मोहनजोदड़ों दोनों नगरों से विशाल गोदामों के अवशेष प्राप्त हुए हैं। मोहनजोदड़ों का मुख्य गोदाम लगभग 45.7 मीटर × 15.2 मीटर आकार का था।[43] यह ईंटों से बना हुआ था और उसमें हवा के निकास हेतु छिद्र बनाए

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i01.22

गए थे, जो अनाज के दीर्घकालिक भंडारण के लिए उपयुक्त थे। हड़प्पा के विशाल गोदाम में बारह – बारह दीवारों के दो समूह है, एक पूर्व की ओर तथा दूसरा पश्चिम की ओर। इन दोनों के बीच लगभग 5 मीटर का अन्तर है। प्रत्येक भण्डारागार अथवा गोदाम का मुख नदी की ओर है, इसका कारण यह है कि इन गोदामों में नदी के मार्ग से सामान आता था।[44] कालीबंगन के दक्षिणी भाग में भी ईंटों से बने चबूतरे प्राप्त हुए हैं, जिनका उपयोग संभवतः अन्न भंडार के रूप में किया जाता था।[45] इसके अतिरिक्त लोथल के आसपास एक गोदाम था जो संभवतः व्यापार का केंद्र और शिल्प कार्यशालाओं के द्वारा तैयार उत्पादों को इकट्ठा करने, भंडारित करने और परिवहन करने का स्थान था।[46] इससे यह प्रतीत होता है कि वस्तुओं को व्यापार से पहले यहाँ सुरक्षित रखा जाता था। अर्थात् यह गोदाम केवल भंडारण का नहीं, बल्कि वितरण केंद्र का कार्य भी करते थे, जिससे यह स्पष्ट है कि सिंधु सभ्यता में आर्थिक प्रबंधन और व्यापारिक वितरण एक ही तंत्र का हिस्सा थे।

निष्कर्ष

सिंधु सभ्यता का व्यापार और वाणिज्यिक संगठन प्राचीन भारतीय आर्थिक इतिहास में एक अभूतपूर्व और सुव्यवस्थित उदाहरण प्रस्तुत करता है। सिंधु सभ्यता में कोई राजा या साम्राज्य के स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलते, फिर भी आर्थिक व्यवस्था अत्यंत सुव्यवस्थित थी। यहाँ केवल एक प्रादेशिक व्यवस्था नहीं थी, बल्कि विकसित शहरी अर्थव्यवस्था, तकनीकी ज्ञान और सुसंघटित प्रशासनिक व्यवस्था स्पष्ट रूप से मौजूद थी। नगर नियोजन से लेकर वस्तु–विनिमय तक, हर स्तर पर नियम, अनुशासन और संगठन दिखाई देता है। वजन–माप की एकरूपता, मुहरों का उपयोग, भंडारण व्यवस्था, तथा आंतरिक–बाह्य व्यापारिक संबंध इत्यादि इस सभ्यता की आर्थिक परिपक्वता का प्रमाण को प्रमाणित करते हैं। साथ ही, मुहरों और प्रतीकों के माध्यम से एक सांस्कृतिक पहचान भी बनी, जो आज भी भारतीय वाणिज्यिक परंपराओं में दिखाई देती है। व्यापारिक संगठन ने केवल आर्थिक जीवन नहीं, बल्कि सामाजिक संरचना को भी प्रभावित किया। कारीगर वर्ग, व्यापारी वर्ग और कृषक वर्ग के बीच सहयोग और निर्भरता ने सामाजिक एकता को बढ़ावा दिया। मेसोपोटामिया, फारस और अरब आदि देशों से संपर्क ने तकनीकी और सांस्कृतिक आदान–प्रदान को भी जन्म दिया। सिंधु सभ्यता ने भारत में समुद्री और अंतरराष्ट्रीय व्यापार की नींव रखी, जो गुप्त काल और दक्षिण भारत के चोल व्यापारिक साम्राज्यों में विकसित हुई। आधुनिक काल में मानकीकरण, स्थानीय उत्पादन और वैश्विक व्यापार का संयोजन ही दीर्घकालिक विकास का आधार है, ये सभी सिंधु सभ्यता की ही देन है। इस दृष्टि से, सिंधु सभ्यता ना केवल प्राचीन इतिहास का विषय है, बल्कि प्रबंधन और अर्थशास्त्र के लिए एक महत्वपूर्ण उदाहरण भी प्रस्तुत करता है। सिंधु सभ्यता ने यह स्पष्ट कर दिया है कि मानव समाज की उन्नति केवल शक्ति या युद्ध पर नहीं, बल्कि व्यवस्थित अर्थव्यवस्था, तकनीक और नैतिक व्यापारिक आचरण पर आधारित होती है। अतः सिंधु सभ्यता का व्यापार और वाणिज्य संगठन केवल इतिहास की धरोहर नहीं, बल्कि आधुनिक सभ्यता के लिए एक आदर्श है, जो आज भी प्रासंगिक है।

सन्दर्भ

1. गिरिजा शंकर प्रसाद मिश्र, *प्राचीन भारत का इतिहास* जयपुर पब्लिशिंग हाउस जयपुर, 1996 पृ0सं0 16

2. द्विजेंद्र झा एवं कृष्णमोहन श्रीमाली,*प्राचीन भारत का इतिहास* हिन्दी माध्यम कार्यानव्य निदेशालय दिल्ली विश्वविधालय, 2017 पृ0सं0 98
3. आर. एस. शर्मा, *इंडियाज एंशिएंट पास्ट* ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस नई दिल्ली, 2019 पृ0सं0 79
4. रोमिला थापर, *भारत का इतिहास*, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, 2012 पृ0सं0 19
5. गिरिजा शंकर प्रसाद मिश्र, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 20
6. सत्यकेतु विद्यालंकार, *प्राचीन भारत* श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली 1978 पृ0सं0 56
7. ओमप्रकाश, *प्राचीन भारत का इतिहास* विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा० लि० दिल्ली, 1973 पृ0सं0 42
8. रमेशचन्द्र मजूमदार, *प्राचीन भारत*, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, 1962 पृ0सं0 10
9. जॉन मार्शल *मोहेनजों–दारों ,एण्ड द इंडस सिवलाइजेशन* खंड–। आर्थर प्रोबस्थैन लंदन, 1931 पृ0सं0 29
10. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 58
11. रोमिला थापर *दा पेंगुइन, हिस्ट्री ऑफ अर्ली इंडिया* पेंगुइन बुक्स नई दिल्ली, 2003 पृ0सं0 80
12. गिरिजा शंकर प्रसाद मिश्र, पूर्वोद्धृत, पृ0सं0 21
13. ओमप्रकाश, पूर्वोद्धृत
14. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, *सिंधु सभ्यता,* उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ, 2003 पृ0सं0 99
15. वही
16. जॉन मार्शल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 32
17. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत, पृ0सं0 173–174
18. रोमिला थापर, पूर्वोद्धृत
19. वही, पृ0सं0 81
20. ईश्वरी प्रसाद, *प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला राजनीति धर्म तथा दर्शन,* मीनू पब्लिकेशन्स इलाहाबाद, 1980 पृ0सं0 29
21. आर. एस. शर्मा, पूर्वोद्धृत, पृ0सं0 80
22. रोमिला थापर, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 81
23. जॉन मार्शल, *मोहेनजों–दारों एण्ड द इंडस सिवलाइजेशन,* खंड–।। आर्थर प्रोबस्थैन, लंदन 1931 पृ0सं0 589
24. वही पृ0सं0 591
25. ईश्वरी प्रसाद, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 32

https://doi.org/10.31995/shodhmanthan.2026.v17i01.22

26. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 184
27. सत्यकेतु विद्यालंकार, पूर्वोद्धृत,
28. आर. एस. शर्मा, पूर्वोद्धृत,
29. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 178
30. रमेशचन्द्र मजूमदार, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 12–13
31. जॉन मार्शल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 371
32. रमेशचन्द्र मजूमदार, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 13
33. जॉन मार्शल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 380
34. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत
35. रोमिला थापर, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 82
36. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 177
37. आर. एस. शर्मा, पूर्वोद्धृत
38. ईश्वरी प्रसाद, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 31
39. गिरिजा शंकर प्रसाद मिश्र, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 22
40. ओमप्रकाश, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 46
41. किरण कुमार थपल्याल एवं संकटा प्रसाद शुक्ल, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 178
42. वही पृ0सं0 167
43. आर. एस. शर्मा, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 76
44. ईश्वरी प्रसाद, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 25
45. आर. एस. शर्मा, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 77
46. रोमिला थापर, पूर्वोद्धृत पृ0सं0 81